समावर्तन संस्कार

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

सम् उपसर्गपूर्वक वृत् धातु से ल्युट् प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुए समावर्तन शब्द का अर्थ है- वेदाभ्यास के पश्चात् युवक का घर लौटना। उपनयन संस्कार बालक के गुरुकुल में प्रवेश का संस्कार था और समावर्तन वहाँ से लौटने का संस्कार था। इस प्रकार समावर्तन संस्कार विद्यार्थी की शिक्षा की पूर्णता तथा घर की ओर प्रत्यावर्तित होने की भावना का प्रतीक था। यह शिक्षाप्राप्ति का दीक्षान्त है। वैदिक साहित्य, गृह्यसूत्र एवं स्मृतियों में इस संस्कार का परिचय उपलब्ध होता है।

यह संस्कार वेद पढ़ने के पश्चात् आचार्य की आज्ञा से सम्पन्न होता था। इस संस्कार में स्नान एवं गुरुदक्षिणा के पश्चात् ब्रह्मचारी युवक गुरु के आश्रय से गुरु की आज्ञा लेकर अपने घर वापस आता था। इस प्रकार आचार्य उसे गृहस्थाश्रम में प्रवेश की अनुमति देते थे।

यह समावर्तन संस्कार ब्रह्मचर्याश्रम के नियमों का पालन न करने वाले सामान्य वेदपाठियों के लिए सम्पन्न नहीं किया जाता था-

अन्यो वेदपाठी न तस्य स्नानम्।

ब्रह्मचर्यपालन एवं विद्याग्रहण की दृष्टि से स्नातकों के तीन प्रकार माने गए हैं-

(क) व्रतस्नातक-व्रतस्नातक उन्हें कहा जाता था जिन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत का पालन तो किया किन्तु विद्या पूर्णरूपेण प्राप्त नहीं कर पाए।

(ख) विद्यास्नातक-विद्यास्नातक उन्हें कहा जाता है, जिन्होंने विद्या तो पूर्णरूपेण प्राप्त की, किन्तु ब्रह्मचर्यव्रत का समुचित रूप से पालन नहीं किया

(ग) उभयस्नातक-उभयस्नातक स्नातकों की सर्वश्रेष्ठ कोटि है। इस कोटि के विद्यार्थी अध्ययन तथा ब्रह्मचर्यव्रत पालन में पूर्णता प्राप्त कर लेते थे।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

इन तीनों स्नातकों का उल्लेख सूत्रसाहित्य तथा स्मृतिसाहित्य में मिल जाता है। वस्तुतः वेदाध्ययन समाप्ति के बाद इस संस्कार का विधान था। एक वेद के अध्ययन की अवधि बारह वर्ष थी और चारों वेदों के अध्ययन की अवधि अड़तालीस वर्ष थी। अत एव वेदाध्ययन की न्यूनतम सीमा बारह वर्ष तथा अधिकतम सीमा अड़तालीस वर्ष निर्धारित हो सकती है।

व्यावहारिक दृष्टि से उपनयन संस्कार के बारह वर्ष के पास्चात् इस संस्कार को सम्पन्न करना समुचित है क्योंकि साठ वर्ष का स्नातक गृहस्थाश्रम प्रवेश के योग्य नहीं रह जाता।

अन्य संस्कारों की भाँति इस संस्कार का शुभ-मुहूर्त निर्धारण आवश्यक है। समावर्तन संस्कार से सम्बन्धित स्नान रोहिणी, तिष्य (पुष्य), उत्तरफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, ऐन्द्री, विशाखा-इन नक्षत्रों में किसी एक में करना चाहिए। स्नान का समय मध्याह्न है। यदि मध्याह्न में कोई असुविधा या आपत्ति हो तो पूर्वाह्न में ही इस संस्कार को सम्पन्न कर लेना चाहिए।

समावर्तन संस्कार के लिए निर्धारित किए गए शुभ दिन में ब्रह्मचारी प्रातःकाल एक कक्ष में बन्द हो जाता था और सूर्य के दर्शन नहीं करता था क्योंकि सूत्रकारों की मान्यता है कि ऐसा करने का उद्देश्य सूर्य को ब्रह्मचारी के तेज से अपमानित करने से बचाना है। तत्पश्चात् शिष्य आचार्य के साथ वैदिक अग्नि में आहुति देता था। तत्पश्चात् वेदी के पास रखे हुए आठ जलकलशों, जो आठ दिशाओं के प्रतीक थे, से आचार्य की आज्ञा से स्नान करता था और स्नान करते समय निर्धारित मन्त्रों का उच्चारण करता था। मन्त्रों का उच्चारण करके आठों कलशों से स्नान करने के पश्चात् मेखला और दण्ड, जो ब्रह्मचर्याश्रम के चिह्न थे को छोड़ता है। मेखला को शिर की ओर से निकाला जाता है। इसके पश्चात् नया वस्त्र धारण कर स्नातक ब्रह्मचारी सूर्य के समक्ष खड़ा होकर मन्त्रोच्चारपूर्वक सूर्यदेव की स्तुति करता है।

इसके पश्चात् ब्रह्मचारी अपने पितरों को जलाञ्जलि देता था और विविध मन्त्रों का उच्चारण करते हुए वस्त्राभूषण धारण करता था।

प्राचीनकाल में समावर्तन के पूर्व शिक्षा प्रदान करने वाले आचार्य को गुरुदक्षिणा देने की परम्परा थी। विद्याध्ययन के समय आचार्य शिष्य से कोई शुल्क नहीं लेते थे। अतएव गुरुदक्षिणा आचार्य के प्रति

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

शिष्य की हार्दिक कृतज्ञता का प्रतीक थी। आचार्य मनु की मान्यता है कि अध्ययन की अवधि में ब्रह्मचारी, गुरु को कुछ देकर उनका उपकार भले न करे, किन्तु समावर्तन से सम्बन्धित स्नान के पूर्व गुरु की आज्ञा पाकर, उनके लिए यथाशक्ति गुरुदक्षिणा लाकर दे।

यदि कोई शिष्य गुरुदक्षिणा देने में असमर्थ हो जाता था, तब उदारचेता आचार्य उसको आश्वासन देते थे कि उन्हें धन की अपेक्षा नहीं है, वह उसके गुणों से ही सन्तुष्ट हैं।

आचार्य मनु ने स्नातक को उपदेश दिया है कि वह बाल, नाखून, मूँछ-दाढ़ी कटाकर, इन्द्रियों का दमन करके, सदाचरण करते हुए स्वाध्याय में तत्पर रहते हुए अपना हितसाधन करे।

तैत्तिरीयोपनिषद् की शीक्षावल्ली के 11 वें अनुवाक में स्नातकों के लिए समावर्तन संस्कार के अनन्तर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके कैसे रहना चाहिए-इसका बड़ा ही सुन्दर उपदेश आया है, जो दीक्षान्त उपदेश कहलाता है। इन उपदेशों का पालन करने से स्नातक से गृहस्थ हुए व्यक्ति का जीवन पूर्ण सदाचारमय, भगवद्भक्तिमय तथा आनन्दमय हो जाता है। यह उपदेश इस प्रकार है-

सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि।

अर्थात् पुत्र! तुम सदा सत्यभाषण करना, आपत्ति पड़ने पर भी झूठ का कदापि आश्रय न लेना, अपने वर्णाश्रम के अनुकूल शास्त्रसम्मत धर्म का अनुष्ठान करना, स्वाध्याय से अर्थात् वेदों के अभ्यास, सन्ध्यावन्दन, गायत्रीजप और भगवन्नाम-गुणकीर्तन आदि नित्यकर्म में कभी भी प्रमाद न करना-अर्थात् न तो कभी अनादरपूर्वक करना और न आलस्यपूर्वक उनका त्याग ही करना। गुरु के लिए दक्षिणा के रूप में उनकी रूचि के अनुरूप धन लाकर प्रेमपूर्वक देना, फिर उनकी आज्ञा से गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके स्वधर्म का पालन करते हुए संतानपरम्परा को सुरक्षित रखना-उसका लोप न करना।अर्थात् शास्त्रविधि के अनुसार विवाहित धर्मपत्नी के साथ ऋतुकाल में नियमित सहवास करके सन्तानोत्पत्ति का कार्य अनासक्तिपूर्वक

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi

करना। तुमको कभी भी सत्य से नहीं चूकना चाहिए अर्थात् हँसी या व्यर्थ की बातों में वाणी की शक्ति को न तो नष्ट करना चाहिए और न परिहास आदि के बहाने कभी झूठ ही बोलना चाहिए। इसी प्रकार धर्मपालन में भी भूल नहीं करना चाहिए अर्थात् कोई बहाना बनाकर या आलस्यवश कभी धर्म की अवहेलना नहीं करनी चाहिए। लौकिक और शास्त्रीय-जितने भी कर्तव्यरूप से प्राप्त शुभ कर्म हैं, उनका कभी त्याग या उनकी उपेक्षा नहीं करना नहीं करनी चाहिए, अपितु यथायोग्य उनका अनुष्ठान करते रहना चाहिए। धन-सम्पत्ति को बढ़ाने लौकिक उन्नति के साधनों के प्रति भी उदासीन नहीं होना चाहिए।पढ़ने और पढ़ाने का जो मुख्य नियम है, उसकी कभी अवहेलना या आलस्यपूर्वक त्याग नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार अग्निहोत्र और यज्ञादि के अनुष्ठानरूप देवकार्य तथा श्राद्ध-तर्पण आदि पितृकार्य के सम्पादन में भी आलस्य या अवहेलनापूर्वक प्रमाद नहीं करना चाहिए। तुम माता में देवबुद्धि रखना, पिता में देवबुद्धि रखना, आचार्य में देवबुद्धि रखना तथा अतिथि में भी देवबुद्धि रखना। जगत् में जो-जो निर्दोष कर्म हैं, उन्हीं का तुम्हें सेवन करना चाहिए।उनसे भिन्न जो दोषयुक्त निषिद्ध कर्म हैं, उनका भूलकर भी अचरण नहीं करना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्नातक भारतीय समाज क महत्त्वपूर्ण व्यक्ति था। ब्रह्मचर्य आश्रम में जो कठोर नियमों का पलन करता था, समावर्तन संस्कार के पश्चात् खान-पान तथा वेष-भूषा से सम्बन्धित नियम बदल जाते थे। आज भी विश्वविद्यालयों में समावर्तन संस्कार दीक्षान्त समारोह के रूप में आयोजित किया जाता है।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi